श्री अन्तादि शतक

(अंत और आदि शब्द पर
विशिष्ट काव्य-रचना)

रचयिता

आचार्यश्री आर्जवसागर जी महाराज

विषय-वस्तु

श्री अन्तादि शतक

- मंगल का फल
- विदेह में सदा जैन
- जैनों का सदाचरण
- जैनों की सद्भावना
- कल्याण-परिचय
- ज्ञान से चारित्र महान
- सम्यग्दर्शन से जीवन की शोभा
- मोक्ष में शाश्वत सुख
- वास्तविक आत्म-स्वरूप
- स्वयंकृत कर्मों का फल
- बहिरात्मा
- स्वभाव की प्राप्ति
- स्याद्वाद
- अनेकान्त
- नयों से वस्तु-तत्त्व
- लक्ष्य प्राप्ति
- पुण्य शुभरूप है।
- दयालु; देवों से भी आदरणीय
- व्रत धारण का फल
- तीर्थदर्शन का फल
- धर्म-पुरुषार्थ का फल
- अर्थ-पुरुषार्थ में न्यायशीलता
- स्वार्थी का काम-पुरुषार्थ विफल
- मोक्ष-पुरुषार्थ की सफलता
- शुभ सुकून में मंगल
- त्यागी के आभूषण
- नियत और अनियत
- पुरुषार्थ हो, प्रमाद नहीं
- सत्पात्र सेवा में पुण्य
- वीतरागी में लौकिक चाह नहीं
- वैरागी का पांच-पाप त्याग
- अशुभ और शुभध्यान
- वीतराग श्रद्धा से धर्मध्यान
- गुरु-आशीष से चारित्र प्राप्ति
- जवानी में दृढ़ चारित्र
- दस-धर्म
- विषय कषाय-विजय
- खादी-खाकी से सबक
- पश्चात्ताप व कर्म-कर्ज मुक्ति
- सल्लेखना है कृशीकरण
- आत्म-शुद्धि
- कर्म-नाश से मोक्ष-प्राप्ति
- मोक्ष में अलौकिक सुख
- सिद्ध; अक्षय मंगल पूज्य
- पावन लक्ष्य में सिद्धों का ध्यान
- जिनश्री पायें

मंगलाचरण

श्री परमेष्ठी, हैं शुभ मंगल।
नाम लेयँ सब होता मंगल।।1।।

★★★

मंगल श्री सद्ज्ञान है मंगल।
समवसरण-श्री मोक्ष हो मंगल।।2।।

(मंगल का फल व कामना)

मंगल-मय, जीवन की राह।
पूर्ण करे, शिव -मंजिल चाह ।।3।।

★★★

चाह हमारी, सिद्ध बनें हम।
प्रथम, भारती-सेवक हर दम।।4।।

(जैन; सद्-गुरु-सेवक)

दम टूटे न, निश-दिन रैन।
सुगुरु सेवा-रत हों जैन।।5।।

(युगादि में प्रथम व विदेह में सदा जैन)

जैन आद्य, तीर्थंकर बेन ।
रहें विदेह में सतत हि जैन।।6।।

(जैनों का सदाचरण)

जैन जगत् में, रहती चैन।
जिनेन्द्र पूजते, सदा हि जैन।।7।।

जैन-आचार बढ़ावे प्रेम।
रहें जगत् -प्रशंसित जैन।।8।।

(जैनों की सद्भावना)

जैन; जगत् का चाहें क्षेम।
बुरा कभी न चाहें जैन ।। 9।।

(जैनों की न्यायप्रियता)

जैन लेन-इंसाफ हि देन।
सदा अहिंसा पालें जैन ।।10।।

★★★

जैन- विधि , निःस्वार्थी देन।
जाने देश-विदेश हि जैन ।।11।।

★★★

जैन अमर हों -जिन -वच जान।
पूर्ण -विश्व में, नामी मान ।।12।।

(निरभिमानी का स्वाभाविक सम्मान)

मान-चाह न हो सम्मान।
लोक- रीति है,जन श्रुति जान।।13।।

(शाश्वत आत्म व कल्याण पर श्रद्धान)

जान आत्म जहँ जीव प्रधान।
धर्म करे,निश्चित कल्याण।।14।।

(कल्याण-परिचय)

कल्याण हि शुभ- मोक्ष महान।
अनंत-सौख्य का, होता पान।।15।।

★★★

पान निजी सुख, दुःख की हान।
अनंत दर्श वा, जहाँ हो ज्ञान ।।16।।

(ज्ञान से चारित्र महान)

ज्ञान अल्प पर, चरित प्रधान।
चरित जहाँ हो, गुण की खान।। 17।।

(सम्यग्दर्शन से जीवन-शोभा)

खान-मूल्य, समकित-सह आय।
चेतन हीरा, सबको भाय।। 18।।

(चेतन रस में, भव-भोग फीके)

भायें भोग न, धर्म सुहाय।
चेतन रस में,वह पग जाय।। 19।।

(वीतरागी को मोक्ष सुख)

जाय राग, तब श्रमण कहाय।
श्रमण अक्ष न, शिव सुख पाय।। 20।।

(मोक्ष में शाश्वत अनंत सुख)

पाय अनंत हि गुण-भंडार।
नश्वर-जग से होता पार ।। 21।।

★★★

पार जगत् से होता जीव।
सिद्ध बने हि सुखी-अतीव ।। 22।।

★★★

अतीव-शांति जहँ, शिव का थान।
अजर, अमर- पद है वह मान।। 23।।

(त्रिलोकी, त्रिलोक पूज्य सिद्धात्मा)

मान -देय वा, पूजे लोक।
पूर्ण- लोक का करे विलोक।। 24।।

(निश्चय से आत्म- स्वरूप)

विलोक वास्तविक आत्म- स्वरूप।
रहा अरस व, अशब्द, अरूप।। 25।।

★★★

अरूप चेतन- निश्चय होय।
आत्म नित्य वह, निज में खोय।। 26।।

(सिद्धों का संसार में अवतार नहीं)

खोय नहीं फिर, स्वयं स्वभाव।
घृत; फिर दुग्ध न आये भाव।। 27।।

(निश्चय से जीव-पुद्गल में भेद)

भाव -जीव का, पुद्गल न।
जड़ वह निश्चय जीव भी न।। 28।।

(स्वयं- कृत कर्मों का फल)

न हो कर्त्ता ,कोई किसी का।
करनी जैसी, फले उसीका।। 29।।

(सुख व दुःख पुण्य, पापाश्रित हैं)

उसीका हि दुःख, पापाश्रित है।
सुख भी उसका, पुण्याश्रित है।। 30।।

(निश्चय से स्वात्मा के अलावा सब पर हैं)

है ना आश्रित कोई किसी पर।
निश्चित; निज से, सब ही हैं पर।। 31।।

(पर को स्व माने वह बहिरात्मा)

पर में भटके, बहिरातम जो।
रमे ही निज में अन्तरातम वो।। 32।।

★★★

वो परमातम-हैं कहलाते।
घाति, अघाति कर्म जलाते।। 33।।

(विभाव के अभाव में स्वभाव की प्राप्ति)

जलाते अपने,जो दुर्भाव।
निज में पाते , निज के भाव।। 34।।

(पर गौण, निज मुख्य में स्याद्वाद)

भाव करे जो,निज के याद।
मुख्य गौणता,-में स्याद्वाद।। 35।।

(किसी गुण-धर्म को नहीं नकारना अनेकांत)

स्याद्वाद; गुण मुख्य गौण हों।
धर्म अनेकों, अनेकांत हो।। 36।।

(वस्तु के एक पक्ष में हठ करना एकांत -मिथ्यात्व)

हो एकांत अगर पक्ष जो।
मिथ्या-दृष्टि कहलाता वो।। 37।।

('भी' में अन्य पक्ष का अस्तित्व व अनेकांत)

वो होता जब 'भी' के भीतर।
अनेकांत से होता है तर ।। 38।।

(नयों में सभी पक्षों के अंश -अंश का कथन)

तर हों धर्मों से पूरक नय ।
अंश-अंश के ग्राहक हों नय।। 39।।

(नयों से वस्तु तत्त्व की गहराई व कल्याण)

नय से जीवन नया बनाओ।
गहरे जाकर भी तर जाओ।। 40।।

(लक्ष्य प्राप्ति में त्याग, संयम चाहिए)

जाओ अपने, लक्ष्य को पाओ ।
त्याग साथ जब, संयम पाओ।। 41।।

(संयम के सह सम्यग्दर्शन आवश्यक है)

पाओ समदर्शन-सह संयम।
समदर्शन बिन, मिथ्या हो यम।। 42।।

(शोभनीय-आचार)

यम,नियम सब, निरतिचार हों।
भाते सबको, सद्-विचार हों ।। 43।।

(पुण्य शुभ रूप है)

हों क्षय शीघ्र ही, अशुभ-पाप जो।
पुण्य-बंध हो,रहता शुभ जो।।44।।

(दया-धर्मी; देवों से भी आदरणीय)

जो भी धर्मी, दया बढ़ाये ।
देवों से भी, आदर पाये।।45।।

(व्रत-धारण का फल व प्रभाव)

पाये व्रत से,स्वर्ग संपदा।
सुर-गण सेवक, आये न विपदा।।46।।

(विदेह- क्षेत्र दर्शन का फल)

विपदा न हो, विदेह में जा ।
तीर्थ लखे, मिटता विधि-कर्जा ।।47।।

★★★

कर्जा मिटे वह, क्षेत्र है पावन।
पूज्य- पुरुष का, उत्तम-जीवन।।48।।

(धर्म-पुरुषार्थ की प्राथमिकता)

जीवन उत्तम, पुरुषार्थी बन।
होता, प्रथम जो धर्मार्थी बन।।49।।

(अर्थ-पुरुषार्थ में न्यायशीलता)

बन जाये गर, धन का अर्थी।
न्याय न भूले, न बन स्वार्थी।।50।।

(स्वार्थी का काम पुरुषार्थ विफल)

स्वार्थी काम,न होय सफल वह।
हो संतति-व्यवहार विफल वह।।51।।

(परिग्रह के त्याग में मोक्ष-पुरुषार्थ सफल)

वह धन वैभव, राज्य भी तजता।
हो सन्यासी, मोक्ष भी भजता।।52।।

(पुण्य और कर्म-निर्जरा में सुख)

भजता जिनवर, पुण्य कमाये।
कर्म-निर्जरा कर, सुख पाये ।।53।।

(शुभ-कर्मों से गुण का समुद्र भरें)

पाये प्रभु -सम, गुण का सागर।
बूंद-बूंद से भरती गागर।।54।।

(मंगलकारक में शुभ-सुकून)

गागर; मंगल-कारक जानो ।
शुभ-सुकून, उपकारक मानो ।।55 ।।

(संसार- मार्ग में दुख , मोक्ष- मार्ग में सुख)

मानो मोक्ष का मार्ग सुखद है।
भव-कारक भव-मार्ग दुखद है ।।56 ।।

(त्यागी-पुरुषार्थी के गुण हैं आभूषण)

है पुरुषार्थी, भोग जो तजता।
संयम, व्रत के, गुण से सजता ।।57 ।।

(भोगी , निकम्मा काल के भरोसे रहता है)

सजता न जो, व्रत पालन कर।
भोगी; नियत में निज-मानस कर ।।58 ।।

(अनियत मान पुरुषार्थ करो)

कर पुरुषार्थ, कार्य जभी हो।
अनियत कहना, उसे तभी हो ।।59 ।।

(पुरुषार्थ कर कार्य नहीं तब भाग्य प्रमुख)

हो पुरुषार्थी, कार्य न हो जब।
नियत-भाग्य वह, कहना हो तब ।।60 ।।

(प्रमाद-तज नित पुरुषार्थ करें)

तब निश-दिन, पुरुषार्थ न हो कम।
तज प्रमाद, कर्त्तव्य करें दम ।।61 ।।

(सत्पात्र दान व सेवा पुण्यकारक है)

दम-भर दान, सुपात्री सेवा।
मिलती सुखकर, पुण्य की मेवा ।।62 ।।

(लौकिक चाह में वीतराग पूजा न भूलें)

मेवा में न, फूले सेवक।
वीतराग का, नित हो पूजक।।63।।

(व्रत, शील निर्दोष पालें)

पूजक शीलाचारी होवे।
व्रत;निर्दोषी पालक होवे।।64।।

(सजग हो, चतुराहार-तज उपवास करें)

होवे सजग ही,अनशन करता।
चतुराहार सभी है तजता।।65।।

(वैरागी पंच पाप छोड़े)

तजता अघ को, वह वैरागी।
विषयों का वह, ना हो रागी।।66।।

(राग में बंध, ध्यान में संवर)

रागी कर्मों से बंधता है।
बंध-रहित ध्यानी होता है।।67।।

(अशुभ-ध्यान तज शुभ-ध्यान हों)

है ध्यानी, न आर्त -रौद्र हों ।
शुक्ल नहीं तो धर्म ध्यान हों ।68।।

(वीतराग की श्रद्धा से धर्म-ध्यान शुरु)

हों धर्म वे ध्यान शुरु तब।
उर होवें देव, शास्त्र, गुरु जब।।69।।

(निर्ग्रंथ-गुरु आशीष से चारित्र प्राप्ति)

जब आशीष, गुरु का मिलता।
चरित्र सरोवर-, का दल खिलता।।70।।

(जवानी का चारित्र बूढ़ेपन तक साथ)

खिलता चरित जवानी हो।
बूढ़े तक ना हानि हो।।71।।

(जवानी की शक्ति अधिक महत्वपूर्ण)

हो न व्रती,जब जवान होवे ।
शक्ति ना , जब बूढ़ा होवे।।72।।

(शक्ति-सह व्रत की भावना सच्चा योग)

होवें दांत, तब चने न मिलते।
चने मिले जब, दांत ही झड़ते ।।73।।

(क्षमा स्वभाव)

झड़ते कठोर- वचन जो सहते।
क्षमा- स्वभावी ज्ञानी रहते।।74।।

(मृदुता पालन)

रहते कोमल, मृदुता पालें।
मान-अपमान में रुचि हि ना लें।।75।।

(सरल स्वभावी)

लें न रुचि वे जहाँ वंचना।
सरल-स्वभावी छल भी रंच न।।76।।

(विषय-अलोभी-अध्यात्म लीन)

ना लोभी विषयों के होते।
अध्यातम में निश-दिन खोते।। 77।।

(सत् वादी की न्यायीजनों में आत्मीयता)

खोते न वे सत्-वादी-पन।
न्यायी जन में रख अपनापन।। 78।।

(संयमीजनों का जीव-दया पालन)

अपना-पन रख जीव बचाते।
संयम-मय जीवन अपनाते।। 79।।

(तपस्वी के उपवासादि पवित्र-तप)

अपनाते हैं तप-मय जीवन।
उपवासादि करते पावन।। 80।।

(त्याग-धर्मी ज्ञान, ध्यान में लीन)

पावन, त्याग-मयी है साधक।
ज्ञान, ध्यान के, नित -आराधक।। 81।।

(आकिंचन्य-धर्मी आत्म-लवलीन)

आराधक हैं, निज-आतम के।
किञ्चित न संग शुद्धातमके।। 82।।

(ब्रह्मलीन की परिषहों में समता)

शुद्धातम-के ध्यान में रहते।
ब्रह्मलीन मुनि, परिषह सहते।। 83।।

(सहनशीलता में कर्म -निर्जरा)

सहते बाधा, कर्म- भगावें।
भव के शत्रु, सभी हरावें।। 84।।

(विषय-कषाय-जयी, मौनी स्वात्म-हितैषी हैं)

हरावें विषय, कषाय वे नित ही।
मित बोलें निज,करते हितही।।85।।

(जग- हितकारक को जगत् का स्नेह मिले)

हितही कर मुनि, मित्र बनाते।
पूर्ण- जगत् का, नेह जो पाते।।86।।

(गृहस्थ व्रती की पोशाक सादी होती है)

पाते गृही-पद, भूषा खादी।
नेता भी वह, पहने खादी ।।87।।

(न्याय के साथ खादी व
खाकी पोशाक की शोभा)

खादी पहने हो, या खाकी।
न्याय चले तो, कर्ज न बाकी।।88।।

(अन्याय में खाकी, खादी में भी बर्बादी)

बाकी कर्म-कर्ज; बर्बादी।
खाकी हो या, फिर वह खादी।।89।।

(दया बिना खादी शोभनीय नहीं)

खादी मोटा, है पहनावा।
दया-धर्म बिन, हो पछतावा।।90।।

(पश्चात्ताप व दंड से जीवन की शुद्धि)

पछतावा से शिक्षा पावे।
कर्ज-चुका, भव-सौम्य बनावे।।91।।

(संयमित जीवन से पवित्रता हासिल)

बनावें अपना, संयमित-जीवन।
व्रत, चारित पा,भव हो पावन।।92।।

(सल्लेखना में कषाय
व काया का कृशीकरण)

पावन हो भव,सन्यासी बन ।
कृश हो कषाय, व व्रतधारी तन।।93।।

(तन विरागी की आत्म-शुद्धि)

तन-सह राग,सूखता जानो।
बढ़े विशुद्धि, निज-शुद्धि मानो।। 94।।

(शुद्धात्मा का ध्यानी कर्म जलाता है)

मानो शुद्धातम ध्यानी वह।
कर्म-जलाता, नित ध्यानी जहँ ।। 95।।

(कर्मनाश से मोक्ष की प्राप्ति)

जहँ ध्यानी जब कर्म नशाता।
भव्य सुदृष्टि वह, सद्गति पाता।। 96।।

(मोक्ष में अलौकिक परमोत्तम -सुख)

पाता सौख्य,अलौकिक उत्तम।
गुण-गण पाता, है परमोत्तम।। 97।।

(सिद्ध; अक्षय मंगल पूज्य हैं)

परमोत्तम जिन-सिद्ध जहाँ हैं।
अक्षय मंगल, पूज्य महा हैं।। 98।।

(पावन-लक्ष्य मोक्ष हेतु जिन,
सिद्धों का ध्यान)

हैं जिन, ध्यान-लक्ष्य में पावन।
जिनसे उन्नत होता जीवन।। 99।।

(सरलता से आनंदमयी मोक्ष- लक्ष्मी को पायें)

जीवन-स्वाद बढ़ाये मिश्री।
'**आर्जव**' बन भवि, पाये जिनश्री।। 100।।

प्रशस्ति

श्री अंतादि यह शतक, लिखी सूक्ति मय जान।
आत्म- विशुद्धि काज यह, नित्य पढ़ें धीमान।। 101।।

★★★

सम्मेदाचल के निकट, रहा ईसरी जान।
जहाँ लिया संकल्प यह,कृति का उत्तम मान।। 102।।

★★★

खनियांधाना में हुई, कृति है पूर्ण महान।
विद्यासागर- सम बने, '**आर्जवता**' की खान।। 103।।

★★★

पच्चीस सौ पचासवाँ ,वीर प्रभु- निर्वाण।
श्री अंतादि यह शतक,-पूर्ण करे कल्याण।। 104।।

★★★

आचार्यश्री 108 आर्जवसागरजी महाराज का

जीवन परिचय

पूर्व नाम	-	पारसचंद जैन
पिता जी	-	श्री शिखरचंद जैन
माता जी	-	श्रीमती मायाबाई जैन
जन्मतिथि	-	11.9.1967, भाद्र शु. अष्टमी
जन्म स्थल	-	फुटेरा कलाँ, जिला- दमोह
बचपन बीता	-	पथरिया, जिला- दमोह (म.प्र.)
शिक्षण	-	बी.ए. (प्रथम वर्ष) डिग्री कॉलेज, दमोह (म.प्र.)
ब्रह्मचर्य व्रत	-	19.12.1984, अतिशय क्षेत्र, पनागर (म.प्र.)
सातवीं प्रतिमा	-	1985, सिद्धक्षेत्र अहारजी (म.प्र.)
क्षुल्लक दीक्षा	-	8.11.85, सिद्धक्षेत्र अहारजी (म.प्र.)
ऐलक दीक्षा	-	10.7.1987, अतिशय क्षेत्र थूवोनजी
मुनि दीक्षा	-	31.3.1988, सि.क्षे. सोनागिरजी, महावीर जयन्ती।
दीक्षा गुरु	-	आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज
आचार्यपद	-	25.01.2015 (माघ शुक्ल षष्ठी) को (समाधि पूर्व आचार्यश्री सीमंधरसागर जी द्वारा इंदौर में)

कृतियाँ व रचनाएँ

अध्यात्मिक प्रवचन, आर्जव कविताएँ, पर्युषण पीयूष, जैनागम-संस्कार (हिन्दी, अंग्रेजी, गुजराती, कन्नड़, तमिल भाषा में), आगम-अनुयोग (भाग 1, 2), तीर्थोदय काव्य, लोक कल्याण विधान, सदाचार सूक्ति काव्य, ओम् योग ध्यान, पद्यानुवाद मञ्जरी (गोमटेश थुदि, भक्तामर स्तोत्र, द्रव्यसंग्रह, इष्टोपदेश, समाधितंत्र, वारसाणुवेक्खा, तत्त्वसार, प्रश्नोत्तर-रत्नमालिका), मोक्ष प्रदायक काव्य (आत्मोद्धार शतक, सन्मार्ग प्रभावना काव्य, तीर्थंकर स्तुति शतक, सम्यक्ध्यान शतक, श्री अंतादि शतक, गुरु-गुण महिमा काव्य, आशीर्वाद शतक, धर्म भावना शतक, अध्यात्म समयोदय काव्य)